HISTORICAL TOURISM

NAME MADHURI

CLASS BA II YEAR

ROLL NO 2327070

SUBJCT CODE HIST(A) 213

Scanned with CamScanner

ारत में मन्दिर वास्तुकला और ंदिर

ारिचय :- भारत की प्राचीन स्थापत्य कला में मन्दिरों का विशिष्ठ स्थान है। भारतीय संस्कृति मंदिर निर्माण के पीछे यह सत्य छुपा था कि ऐसा धर्म स्थापित हो जो जनता को सहजता व व्यवहारिकता से प्राप्त हो सके। इसकी पूर्ति के लिए मन्दिर स्थापत्य का प्रादुर्भाव हुआ इससे पूर्व भारत में बौद्ध एवं जैन धर्म द्वारा गुहा, स्तूपों एवं चैत्यों का निर्माण किया जाने लगा था। कुषाणकाल के बाद गुप्त काल में देवताओं की पूजा के सा ही देवालयों का निर्माण भी प्रारंभ हुआ। प्रारंभिक मान्दिरों का वास्तु विन्यास बौद्ध विहारों से प्रभावित था। इनकी छत चिपटी था इनके गर्भगृह होता था। मान्दिरों के रूप में विधान की कल्पना की ग और कलाकारों ने मान्दिरों को साकार रूप प्रदान करने के साथ ही देह में स्थापित किया। चौथी सदी में भागवत धर्म के अभ्युदय के पुश्च भगवान की प्रतिमा स्थापित करने की आवश्यकता प्रतीत हुई। अतएव वैष्ण तानुयायी मान्दिर निर्माण की योजना करने लगे। साँची का दो स्तम्भ ये वाला मंदिर गुप्तमान्दिर के प्रथम चरण का माना जाता है। बाद में गु ल में वृहदस्तु पर मंदिरों का निर्माण किया गया। जिनमें वैष्णव दोनों मन्दिरों तथा धर्मों के मंदिर हैं। प्रारम्भ में ये मंदिर स और इनमें स्तंभ अलंकृत नहीं थे। शिखरों के स्थान पर छत ाद होती थी तथा गर्भगृह में भगवन की ऊँची प्रतिमा, स्थापित की ती थी। गर्भगृह के समक्ष स्तंभों पर आश्रित एक छोटा अथवा बड़ा गमदा भी मिलने लगा। यही परम्परा बाद के कालों में प्राप्त होती है।

Scanned with CamScanner

मंदिर निर्माण की प्रक्रिया का आरंभ तो मौर्यकाल से शुरू हो गया आगे चलकर उसमें सुधार हुआ जिसे गुप्त काल के मन्दिरों में जा सकता था। प्राचीन भारतीय इतिहास के आधार पर भारत मंदिर निर्माण शैलियों को तीन प्रमुख शैलियों में बाँटा गया था -

मंदिर स्थापत्य शैलियाँ

नागर शैली | द्रविड़ शैली | वेसर शै

नागर शैली :-

नागर शब्द नगर से बना है। सर्वप्रथम नगर के निर्माण होने के कारण इसे नागर शैली कहा जाता है। यह मं स्थापत्य की संरचनात्मक शैली है जो हिमालय से लेकर विंध्य पर्वत तक क्षेत्रों में प्रचलित थी। इसे 8 वीं और 13वीं शताब्दी के बीच उत्तर भा के शासकों द्वारा पर्याप्त संरक्षण दिया गया। नागर स्थापत्य के मंदिर नीचे से ऊपर तक आयताकार रूप से निर्मित होते हैं। इस शैली में मंदिर को एक विशाल चबूतरे पर बनाया जाता था और उस तक पहुंचने के लिए सीढ़ियां होती थी। इस शैली के अन्तर्गत गर्भगृह के ऊपर टेढ़ी रेखाओं के साथ सपकार शिखर के निर्माण किया जाता था। जो ऊपर से पतला और नीचे से चौड़ा होता था। सबसे ऊपर एक कलश बनाया जाता था। मंदिर के गर्भगृह में एक मूर्ति रखी जाती थी, जिसके भीतर जाने के लिए एक द्वार होता था। नागर शैली के अन्तर्गत मंदिरों का निर्माण खुले क्षेत्र में किया जाता था। गर्भगृह के सामने एक विशाल कक्ष बनाया जाता था जिसे मंडप कहते थे जो पिरामिड के आकार का होता था। इस मंडप का इस्तेमाल मंदिर में उत्सव मनाने आ

Scanned with CamScanner

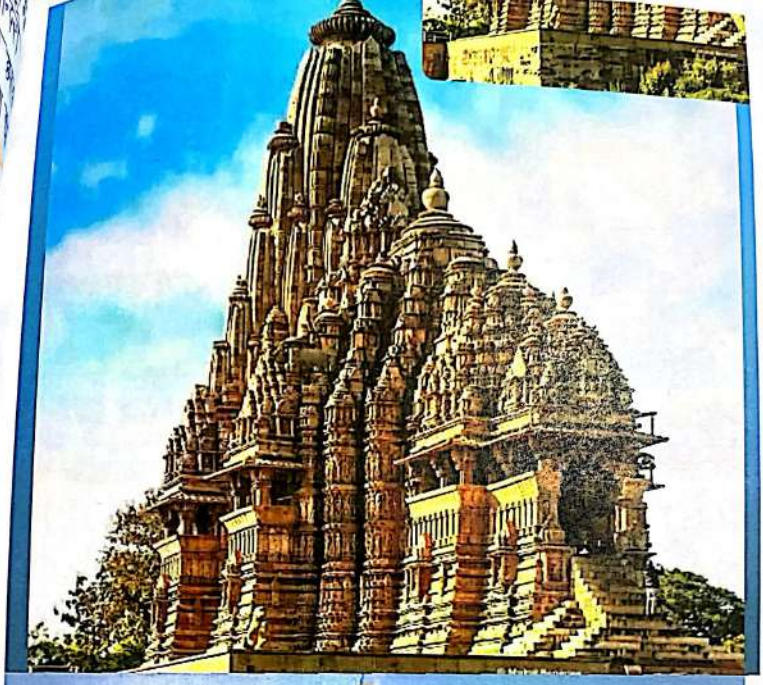

Scanned with CamScanner

...वेश किया जाता है। दूसरा है महा मंडप यह एक छोटा सा चबूतरा है
पर नृत्यांगना धार्मिक नृत्य किया करती थी। यह एक ऐसा एकमात्र
...र है जिसका चबूतरा भी अपनी प्रारंभिक स्थिति में सुरक्षित है। यह
...र बालू पत्थर का बना हुआ है। लक्ष्मण मंदिर के गर्भगृह में भगवान
...णु की प्रतिमा विराजमान है। भगवान विष्णु की प्रतिमा में हम लोगों को
...न मुख देखने को मिलते हैं।

...न्दारिया महादेव मंदिर :-

एक समय खुजराहो
...ंदेल राजवंश की राजधानी हुआ करती थी। वहां के अधिकतर मंदिरों
को चंदेल शासकों ने ही बनवाया था। वहां के प्रमुख मंदिरों में से
एक कान्दारिया महादेव को गंडदेव के पुत्र सम्राट विद्याधर ने बनवाया। माना
जाता है कि यह मंदिर ईस्वी 1025 से 1050 के बीच बना है। इस मंदिर
को विद्याधर ने महमूद गजनी को परास्त करने के बाद बनवाया था। वह शि...
भक्त थे और उनका मनना था कि शिव की कृपा से ही उन्होंने महमूद गजनी
...परास्त किया इसलिए उन्होंने इस मंदिर निर्माण करवाया। कान्दारिया
...हादेव खुजराहो के पश्चिमी मंदिर समूह का एक प्रमुख मंदिर है। यह इस
...मूह के सभी मंदिरों में से सबसे बड़ा और सुंदर मंदिर है। मंदिर शिव
...गवान को समर्पित है जिसके गर्भ गृह में शिवलिंग विराजमान है।
...ह शिवलिंग संगमरमर से बना है। मंदिर की दीवारों पर बहुत ही सुन्द...
...नक्काशी की गई है। इस विशाल मंदिर के स्थापत्य एवं मूर्तिकला में
...ध्य कालीन भारतीय निर्माण के सभी लक्षण विद्यमान हैं जिनके लिए मध्य...
...रत की स्थापत्य कला की श्रेष्ठता मानी जाती है। खुजराहो के मंदिर श्रृंगा...
...न प्रतिमाओं के लिए बहुत प्रसिद्ध है। इस मंदिर के शिखर और अलंक...
...अपनी विशेष पहचान है। इस धार में पहुंचने के लिए सीढ़ियों से
...र 13 ऊँचे चबूतरों पर चढ़ना होता है। मंदिर के चबूतरे पर
...ीर्ण एवं भव्य नक्काशी की गई है।

Scanned with CamScanner

विशेषताएं :— 1. नागर शैली में शिखर अपनी ऊँचाई के क्र की ओर क्रमशः पतला होता जाता है। मंदिर शिखर मीनारनुमा अथ गुंबदाकार होता है।

2. मंदिर में सभा भवन और प्रदक्षिणा पथ भी होता है।

3. शिखर पर आमलक की स्थापना होती है। मंदिर की सबसे ऊप भाग शीर्ष या मस्तक को आमलक कहा जाता है।

4. इस शैली में मंदिर चतुष्कोणीय होते थे और गर्भगृह वर्गाकार होत

5. नागर मंदिरों का शिखर / रेखीय / वक्राकार होता था।

6. नागर मंदिरों का निर्माण सामान्यतः ऊँचे चबूतरे पर किया ज

नागर शैली में निर्मित प्रमुख मंदि

1. खुजराहो का लक्ष्मण मंदिर :—

खुजराहो के लक्ष्मण मंदिर का निर्माण 930 में हुआ था। यह मंदिर 7 वर्ष की अवधि में बनकर तैयार हुआ था। इस मंदिर को यशोवर्मन मंदिर नाम के राजा ने बनवाया है। यशोवर्मन को लक्ष्मण वर्मन भी कहा जाता था। इस इस मंदिर को लक्ष्मण मंदिर भी कहते हैं। लोकमत के अनुसार इस मंदिर को बनवाने के लिए यशोवर्मन ने मथुरा 16000 कारीगरों को बुलवाया। लक्ष्मण मंदिर खुजराहो का एक प्रमुख मंदिर है। यह मंदिर पश्चिमी मन्दिर समूह में स्थित है। लक्ष्मण मंदिर की दीवारों में उत्तम नक्का देखने के लिए मिलती है, जो अद्भुत है। इस मंदिर के चारों कोनों में छोटे - छोटे मंदिर बनाए गए, जिन्हें उप मन्दिर कहते हैं। लक्ष्मण मंदि साधार तथा पंचायतन शैली में बना है। लक्ष्मण मंदिर की आंतरिक रू

Scanned with CamScanner

विड़ शैली

ड़ शैली दक्षिण भारतीय हिन्दु स्थापत्यकला की तीन में से एक शैली है। शैली दक्षिण भारत में विकसित होने के कारण द्रविड़ शैली जाती है। द्रविड़ शैली दक्षिण भारत में कृष्णा नदी से लेकर कन्याकुमारी प्रचलित थी। चोल शासकों के द्वारा द्रविड़ शैली में कई मंदिरों निर्माण किया गया था। यह शैली दक्षिण भारत तक ही सीमित थी। शैली में गर्भगृह अथवा प्रतिमा कक्ष के ऊपर एक के बाद एक पाँच सात मंजिलों का निर्माण किया जाता था। हर मंजिल का निर्माण एक ष शैली में होता था जिसे विमान कहा जाता था। गर्भगृह के सामने छतों वाले स्तंभों पर बना एक विशाल हॉल होता था जिसे मंडप जाता था। हॉल के स्तंभों पर बारीक खुदाई का काम किया जाता मंडप का प्रयोग विशेष अवसरों पर संभाएं करने और देवदासियों त्य करने के लिए होता था। गर्भगृह तक जाने के लिए भक्तजनों लिए परिक्रमा मार्ग भी बनाया जाता था। इस परिक्रमा मार्ग में देवताओं की अनेक मूर्तियां होती थी। मंडप और प्रतिमाकक्ष गर्भगृह के प्रांगण में प्रवेश करने के लिए बड़े-बड़े दरवाजे थे, जिन्हें गोपुरम कहा जाता था। दक्षिण भारत में चोल सकों के द्वारा अपने मंदिर निर्माण में द्रविड़ शैली को अपनाया था।

शेषताएँ :- द्रविड़ मंदिरों का निचला भाग वर्गाकार और क गुंबदाकार, छह या आठ पहलुओं वाला होता है।

तिड़ मंदिरों की शैली में चारदीवारी का निर्माण किया जाता था।

विड़ मंदिरों में प्रवेश के लिए विशालकाय

Scanned with CamScanner

5. द्रविड़ मंदिरों के शिखर पिरामिडाकार होते थे।
5. द्रविड़ मंदिर निर्माण में तालाब का निर्माण इस भी शैली क विशेषता थी।
6. द्रविड़ मंदिर अष्टभुजाकार होते थे।
7. द्रविड़ मंदिर में शिखर के सर्वोच्च भाग पर स्तूपिका बनी
8. द्रविड़ शैली के मंदिर बहुमंजिला होते है।

द्रविड़ शैली में निर्मित प्रमुख मं

द्रविड़ शैली दक्षिण भारतीय हिन्दु स्थापत्य कला की तीन प्रमुख शैलि में से एक है। यह शैली दक्षिण भारत में होने के बाद द्रविड़ श कहलाती है। तामिलनाडु व निकटवर्ती क्षेत्रों के अधिकांश मंदिर इसी श में बने है।

विरूपाक्ष मंदिर :-

विरूपाक्ष मंदिर सुंदर आ आकर्षक है। इसका निर्माण विक्रमादित्य की एक रानी ने 740 ई० में लगभग करवाया था। मंदिर एक विशाल प्रांगण में स्थित है जिस सोलह छोटे-छोटे मंदिर है। इसमें गोपुरम भी बना है। चालुक्य का में सर्वप्रथम इसी मंदिर में गोपुरम मिलता है। मंदिर का विमान चार मंजि है। शिखर के ऊपर कलश स्थित है। मंडप के सामने वेदिका और एक ोरण द्वार है। मंदिर की बाहरी दीवार में स्तंभ जोड़कर सुंदर ताख बना ए है। विरूपाक्ष मंदिर में मूर्तियों का निर्माण मंदिर को सजाने के लि किया गया है। गुफा स्तंभों तथा छतों पर बड़ी संख्या में मूर्तियां चित्रित क ई है। इन मूर्तियों में मुख्यतः नटराज शिव की विभिन्न मुद्राएं, महिष सुर मर्दिनी, अर्धनारीश्वर व विष्णु के विविध अवतारी रूपों को लात्मक ढंग से प्रदर्शित किया है।

Scanned with CamScanner

हिन्दु तथा एक जैन धर्म से सम्बंधित है। प्रत्येक मे स्तम्भयुक्त
दा, मेहरबा युक्त हॉल तथा एक छोटा वर्गाकार गर्भगृह पाषाण को
से काटाकार बनायें गये है। इनमे एक विष्णु गुफा है जिसमे विष्णु
नंत पर बैठी हुई एक मूर्ति और दूसरी नरसिंह रूप की मूर्ति
हुई है। एक अन्य शैल गुफा है जिसका गुफा (गर्भगृह) वर्गाकार
डप तथा बरामदे में प्रकाशमक स्तंभ लगे है जो मूर्ति। शिल्प
सजाये गए है। गुफा मंदिरो तथा बाहरी भाग तो सादा है, किन्तु
दीवार पर विभिन्न प्रकार की सुन्दर-सुन्दर चित्रकारियाँ प्राप्त
है।

जौर का बृहदेश्वर मंदिर

श्वर मंदिर दक्षिण भारत में स्थित प्राचीन वास्तुकला का एक अद्भुत
ना है। यह तामिलनाडु के तंजौर में स्थित एक हिन्दु मान्दिर है।
11 वी शताब्दी के आरंभ मे बनाया गया था। विश्व में यह अपनी
म मंदिर है जो कि ग्रेनाइड का बना हुआ है। यह अपनी भव्यता
शिल्प और केन्द्रीय गुम्बद से लोगों को आकर्षित करता है। इसका
ण 1003-1010 ई० के मध्य चोल शासक राजराजा प्रथम ने
या था। उसके नाम पर इसे राजराजेश्वर मंदिर का नाम भी दि
है। मंदिर का शिखर लगभग 190 फुट ऊँचा है और इसकी 13 मंजि
इन मंजिलों की चोटी पर एक भव्य शीर्ष है जो एक ही पत्थर
बना हुआ है। उस शिखर की ऊँचाई 25 फुट और वजन 90 टन है
विशाल गुबंद को मंदिर को कैसे स्थापित किया गया होगा
आश्चर्य का विषय है। इसके अतिरिक्त मंदिर मे विशालकाय

मीनाक्षी सुन्देश्वर मंदिर

मीनाक्षी सुंदेश्वर मंदिर जिसे मीनाक्षी अम्मन मंदिर, मीनाक्षी मंदिर के नाम से भी जाना जाता है। भारत में सबसे पुराने और महत्वपू मंदिरों में से एक है। मदुरई शहर में स्थित मंदिर का एक महान धा और ऐतिहासिक महत्व है। यह माना जाता है कि भगवान शिव ने सुंदरेश्वर के रूप में आये और पार्वती (मीनाक्षी) से उस स्थान पर श की जहां मंदिर वर्तमान में स्थित है। अपनी आश्चर्यजनक वास्तुकला लिए प्रसिद्ध, मीनाक्षी मंदिर को दुनिया के आश्चर्यों में से एक रूप मे नामित किया गया था लेकिन इसे दुनिया के सात आश्चर्यों की सू में शामिल नहीं किया जा सकता। हालांकि, मंदिर निश्चित रूप से भा के अजूबों में से एक है।

कैलाशनाथ मंदिर कांचीपुरम

कैलाशनाथ मंदिर कांचीपुरम में स्थित एक हिन्दु मंदिर है। यह दक्षिण भारत के सबसे शानदार मंदिरों में से एक माना जाता है। उस मंदिर का निर्माण आठवीं शताब्दी में पल्लव वंश के राजा नरसिंह वर्मन द्वितीय ने अपनी पत्नी की प्रार्थना पर बनवाया था। उस मंदिर के अग्र भाग का निर्माण राजा नरसिंह वर्मन द्वितीय के पुत्र महेन्द्र वर्मन द्वितीय ने करवा था। उस मंदिर की नक्काशी पर, विशेष ध्यान दिया गया है। उस मंदिर के दीवारों पर शिव और पार्वती की नृत्य प्रतियोगिता को चित्रों के माध्य से दर्शाया गया है।

बादामी का मंदिर

बादामी में पाषाण को काट कर चार स्तंभयुक्त मंडप बनाये गये हैं। इनमें

Scanned with CamScanner

Scanned with CamScanner

हैलेबिड़ु होयसलेश्वर मंदिर

मैसूर के होयंसल शासक कला के महान निर्माता और संरक्षक थे। हैलेबिड़ु में उस द्वारा बनाया गया होयसलेश्वर मंदिर सबसे महान है। इस मंदिर को भूरे रंग के मुलायम पत्थर से बनाया गया है। इस मंदिर के निर्माण में एक नवीन शैली का इस्तेमाल किया गया है क्योंकि यह मंदिर न वर्गाकार है और न आयाताकार है, बल्कि एक नक्षत्र की भांति है। इस मंदिर में पूजा गृह और स्तंभो वाला हॉल आदि अलग-अलग बनाये गये हैं। प्रवेश द्वार और आन्तरिक भाग को शिल्प व मूर्तियों से सुसज्जित किया गया है। यह मंदिर भगवान शिव के दो स्वरूपों होयसलेश्वर एवं शांतलेश्वर को समर्पित है। इस मंदिर का निर्माण 12 वी शताब्दी पर तीन प्रकार की मूर्तियों स्पष्ट दिखाई देती हैं, जिसमें सबसे नीचे पशुओं की मूर्तियां हैं जिनमें हाथी, शेर, घोड़ा, हंस, मकर आदि को दर्शाया गया है। मध्य देवी देवताओं और सबसे ऊपर साधारण जीवन के दृश्यों को उकेरा गया है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि भारत की प्राचीन स्थापत्य कला में मंदिरों का विशिष्ठ स्थान है। पूरे भारत मंदिर निर्माण की तीन ही शैलियां नागर, द्रविड़ और वेसर शैली का इस्तेमाल कर विभिन्न प्रकार के मंदिरों और भवनों का निर्माण किया गया है। इस क्षेत्र में बने मंदिरों पर नागर और द्रविड़ शैली के प्रभाव को देखा जा सकता है।

Scanned with CamScanner

DATE : /

History

नाम = प्रिंसी

कक्षा = बी.ए. द्वितीय वर्ष

अनुक्रमांक = 2327063

विषय कोड = HIST(A) 203
HIST(A) 204
HIST(A) 213
HIST(A) 215

SUBMITTED
To :-

Prof. Pramod
Thakur
Sir...

Scanned with CamScanner

शेरशाह सूरी

शेरशाह सूरी का आरंभिक जीवन :-

सूर वंश का संस्थापक अफगान वंशीय शेरशाह सूरी था।

→ डॉ के. आर कानूनगो के अनुसार :→ शेरशाह सूरी का जन्म हरियाणा प्रांत के नारनौल स्थान पर 1486 ई. में हुआ।

→ परमात्मा शरण के अनुसार :→ शेरशाह के अनुसार सूर का जन्म 1472 ई. में हुआ था।

शेरशाह सूरी के बचपन का नाम फरीद खाँ था एवं इनके पिता का नाम हसन खाँ था। इनके पिता सासाराम के ज़मींदार थे।

शिक्षा :-

हसन खाँ ने फरीद की शिक्षा का उचित प्रबंध नहीं किया

Scanned with CamScanner

PAGE NO.
DATE :

क्योंकि वह अपनी छोटी पत्नी के हाथों की कठपुतली बना हुआ अतः वह 1444 ई. में फरीद पिता से नाराज़ होकर जौनपुर आ गया और यहां इसने शिक्षा प्राप्त की। फरीद खां ने यहां अरबी और फारसी की शिक्षा प्राप्त की। वह 12 वर्षों में ही मौलवी बन गया। उसने **गुलिस्ताँ, बोस्ताँ, सिकंदरनामा** जैसी पुस्तकों को भी अच्छी तरह से कंठस्थ कर लिया। फरीद खाँ की योग्यता ने जमाल खाँ को बहुत प्रभावित किया। उसने पिता और पुत्र के बीच समझौता करवा दिया। 1447 ई. में हसन खाँ ने फरीद को अपने पास बुला लिया और जागीरों का प्रबंध सौंप दिया। 1520 ई. में पिता हसन की मृत्यु के बाद यह अपनी पिता की गद्दी का मालिक हो गया परंतु पारिवारिक विवाद के कारण यह बाद में दक्षिण बिहार के सूबेदार **बहार खाँ लोहानी** के यहां नौकरी करने के लिए चला गया।

➔ बहार खाँ लोहानी ने शेरशाह को अपने बेटे जलाल खाँ का संरक्षक नियुक्त कर दिया। इन्होंने बहार खाँ के साथ एक शिकार यात्रा में एक शेर का वध किया जिस कारण इनका नाम फरीद खाँ से **शेर खाँ** पड़ गया।

लोहानी सरदारों के षड्यंत्र के कारण शेरशाह सूरी को बिहार छोड़ना पड़ा और वह बाबर की सेना में शामिल हो गया और चंदेरी के युद्ध में बाबर की तरफ से युद्ध करता है।

➔ शेरशाह मुगल सेना में लगभग 15 महीने तक रहा। इस दौरान उसने मुगलों के सैनिक संगठन, सैनिक चालें, तोपखाने के प्रयोग का अध्ययन किया और यह अनुभव किया कि मुगल प्रशासन तथा सैन्य - विधान में अनेक कमियां हैं। यदि प्रत्यन किया जाए तो मुगलों को हराया जा सकता है।

" यदि ईश्वर ने मेरी सहायता की और भाग्य ने मेरा साथ दिया तो मैं सरलता से मुगलों को भारत से निकाल दूँगा।"

Scanned with CamScanner

जब बाबर ने चंदेरी का युद्ध किया तब शेरशाह की सेवाएं बाबर के लिए काफी लाभदायक सिद्ध हुई। बाबर को इस महत्वकांक्षी अफगा पर संदेह हो गया। उसने कहा –

"शेर खाँ पर नज़र रखना, वह चालाक आदमी है और उसके माथे पर राजत्व के लक्षण दिखाई देते हैं।"

शेरखाँ को भी लगा कि मुगलों के साथ उसका निर्वाह नहीं होगा 1528 ई. के अंत में शेर खाँ मुगलों की नौकरी छोड़ कर पुनः लोहानी के पास आ गया।

➡ 1528 ई. में लोहानी की मृत्यु हो गई और उसका उत्तराधिकारी नाबालिग था। शेर खाँ लोहानी की विधवा दूदू बेगम से विवाह कर लेता है और खुद प्रधान शासक बन जाता है।

"जलाल खाँ बाद में कुछ अफगान सरदारों के साथ बंगाल भाग गया इसके बाद शेर खाँ पूर्णरूप से दक्षिण बिहार का शासक बन गया।"

शेरशाह ने 1529 ई. में बंगाल के शासक नुसरत शाह को पराजित कर हज़रत-ए-आला की उपाधि धारण की।
1530 ई. में इसने चुनार किले ताज खाँ की विधवा लाड मल्लि से विवाह करके चुनार के किले पर भी अधिकार कर लिया।

शेरशाह सूरी की विजय

➡ चुनार का प्रथम घेरा (1532):-

चुनार का किला इस समय शेरखाँ के अधीन था, हुमायूं ने 4 महीने तक इस किले को घेरे रखा लेकिन जीत नहीं सका। शेरखाँ बाद में लड़ने की स्थिति में नहीं रहा अतः उसने हुमायूं के साथ संधि कर ली

Sign.....

Scanned with CamScanner

PAGE NO.
DATE

→ चुनार का द्वितीय अभियान (1537 ई.) :- शेरखाँ ने 1537 ई. मे बंगाल पर आक्रमण किया, इस अवसर पर बंगाल के शासक ग्यासुद्दीन महमूद शाह ने हुमायूँ से सहायता की माँग की प हुमायूँ सहायता नहीं कर सका। हुमायूं ने यद्यपि चुनार पर विजय प्राप्त कर ली थी परंतु शेरखाँ ने पुनः छः माह के भीतर चुनार के दुर्ग पर अधिकार कर लिया।

→ चौसा का युद्ध (1539 ई.) :- यह युद्ध शेरखाँ और हुमायूँ के बीच लड़ा गया। इस युद्ध में हुमायूं के अनेक सैनिक गंगा ए कर्मनासा नदी में डूब कर मर गए तथा हुमायूं भी गंगा नदी में कूद गया। **निज़ाम** नामक एक भिश्ती ने उसे डूबने से बचा लि इस तरह शेरखाँ विजयी हुआ व शेरशाह की उपाधि धारण की

→ कन्नौज (बिलग्राम) का युद्ध (1540 ई.) :- यह युद्ध भी शेरशाह

हुमायूं के बीच लड़ा गया। इस युद्ध में हुमायूं पराजित हुआ। इस युद्ध के बाद शेरशाह का आगरा व दिल्ली पर अधिकार हो गया। हुमायूं को हराने के बाद इसने "सुल्तान" की उपाधि धारण की।

-:- साम्राज्य विस्तार -:-

→ बंगाल विद्रोह का दमन :-

बंगाल के गवर्नर खिज्र खाँ ने 1541 ई. में विद्रोह कर दिया। इसने अब बंगाल को 19 सरकारों में बांट दिया और प्रत्येक सरकार में एक **शिकदार - ए- शिकदारान** की नियुक्ति की जो सुल्तान के सीधे नियंत्रण में थे।

→ मालवा विजय (1542 ई.) :-

इस समय वहां मल्लू खां (कादिरशाह) शासक था। इसने बिना लड़े ही शेरशाह की अधीनता स्वीकार कर ली और मालवा राज्य शेरशाह को सौंप दिया।

→ रायसीन विजय (1543 ई.) :-

यहाँ का राजा पूरनमल था। शेरशाह ने रायसीन के दुर्ग को चालाकी एवं धोखे से विजित किया, जो इसके जीवन में कलंक है।

→ मारवाड़ विजय (1544 ई.) :-

यहाँ का शासक मालदेव था। यह राजपूतों के शौर्य से इतना प्रभावित हुआ कि इसने कहा - "मुट्ठी भर बाजरे के लिए मैं हिंदुस्तान को प्रायः खो चुका था।" शेरशाह सूरी ने मालदेव को पराजित कर दिया और मालदेव सिवाना पर्वत होकर भाग गया।

→ कालिंजर अभियान (1545 ई.) :-

यहाँ का शासक कीर्ति सिंह था

Scanned with CamScanner

कालिंजर का घेरा लगभग 7 महीने तक पड़ा रहा, जब किले विजित नहीं कर सका तब शेरशाह ने मई 1545 में किले की दीवार का घेरा को गोला बारूद से उड़ा देने की आज्ञा दी। युद्ध सामग्री में आग लगने से शेरशाह गंभीर रूप से घायल हो गया और उसकी मृत्यु हो गई, लेकिन मरने से पहले इसे किले को जीतने का समाचार प्राप्त हो गया था।

*** इस तरह शेरशाह सूरी का साम्राज्य उत्तर मे हिमालय से लेकर दक्षिण में विंध्यांचल तक और पश्चिम में सिंधु नदी से लेकर पूर्व में सोनारगांव (बंगाल) तक फैला था।

सूर वंश का अंत :-

शेरशाह की मृत्यु के बाद उसके उत्तराधिकारी दुर्बल निकले। 1555 ई. तक सूर वंश तीन भागों में बंट गया।

→ सिंहासन के एक दावेदार इब्राहीमखाँ सूर ने आक्रमण कर दिल्ली व आगरा पर आधिपत्य कर लिया और इब्राहीम की उपाधि धारण की।

→ इब्राहीम खाँ कुछ दिनों ही शासन कर पाया था कि पंजाब के सूबेदार अहमदखाँ ने उस पर आक्रमण करके दिल्ली एवं आगरा पर अधिकार कर लिया।

→ सरहिंद युद्ध 1555 ई. में हुमायूं ने सिकंदरशाह को पराजित कर पुनः मुगल साम्राज्य की स्थापना की।
इस तरह सूर वंश का अंत हो गया।

शेरशाह सूरी के प्रशानिक सुधार :-

केंद्रीय शासन :- शेरशाह सूरी ने एक कुशल शासन एवं

Scanned with CamScanner

संगठित केंद्रीय प्रबंध का गठन किया था। राज्य की सभी शक्तियाँ शेरशाह सूरी के पास थी। सेना का सर्वोच्च अधिकारी भी राजा ही होता था। राजा अपने अधिकारी को किसी भी समय पद से हटा सकता था। उसका निर्णय ही अंतिम होता था। उसे लोगों पर कर लगाने एवं हटाने का अधिकार होता था। राजा ही युद्ध एवं संधि करता था। अपने प्रशासन को अच्छी ढंग से चलाने के लिए मंत्रिपरिषद् की नियुक्ति की थी। इस पर केवल योग्य एवं ईमानदार व्यक्ति को ही नियुक्त किया जाता था। उनके प्रमुख मंत्री 'दीवान-ए-आरिज़', 'दीवान-ए-रसालत', 'दीवान-ए-इंशा', 'दीवान-ए-बरीद', 'दीवान-ए-काज़' थे। शेरशाह का पूरा केंद्रीय प्रबंध उसके हाथ में ही था। यही कारण था कि उसका प्रशासन प्रबंध उच्च कोटि का था।

शेरशाह सूरी ने प्रशासन को आगे प्रांतों में बाँटा हुआ था परंतु इसमें इतिहासकारों में मतभेद है। कुछेक के अनुसार प्रांत को सूरी ने अवश्य ही 12 प्रांतों में बांटा होगा। प्रांतों के अधिकारी को 'हकीम' कहा जाता था।

प्रांतों को आगे सरकारों में विभाजित किया गया था। शेरशाह सूरी ने संपूर्ण साम्राज्य को 66 सरकारों में बांटा था। इन 66 सरकारों में से 19 सरकारें बंगाल की थी और 47 सरकारें शेष साम्राज्य की थी। सरकार के प्रबंध के लिए दो अधिकारियों की नियुक्ति की जाती थी, जिन्हें शिकदार-ए-शिकदारान तथा मुंसिफ-ए-मुन्सिफान कहा जाता था।

शेरशाह सूरी ने सरकारों को आगे परगनों में विभाजित कर रखा

Scanned with CamScanner

एक सरकार में कई परगने थे, जिनमें शिकदार एवं मुन्सि नामक अधिकारी समस्त प्रशासनिक व्यवस्था की देखभाल करते थे।

शेरशाह सूरी की सबसे छोटी इकाई गांव थी। प्रत्येक गांव का प्रशासन पंचायत द्वारा चलाया जाता था। इनकी सहायता के लिए मुकद्दम, पटवारी नामक अधिकारी नियुक्त किए जाते थे।

भू-राजस्व सुधार :-

शेरशाह सूरी ने भू-राजस्व व्यवस्था के लिए अनेक कार्य किए। वह बहुत अच्छे से जानता था कि किसानों की खुशहाली ही उसके राज्य की खुशहाली बन सकती है। इसलिए उसने लगान प्रणाली के क्षेत्र में अनेक सुधार किए। उसने मालवा और राजपूताना के क्षेत्र को छोड़कर संपूर्ण राज्य की पैमाइश करवाई। इसके लिए उसने सिकंदर लोदी के गज का प्रयोग किया गया था। उसने भूमि को उपज के आधार पर तीन श्रेणियों में बांट दिया- उत्तम, मध्यम एवं घटिया श्रेणी। तत्पश्चात, प्रति बीघा भूमि के हिसाब से प्रत्येक फसल तथा प्रत्येक श्रेणी के वार्षिक उत्पाद को निश्चित किया जाता था। उपज का 1/3 भाग भू-राजस्व के रूप में लिया जाता था। लगान निश्चित करते समय यह देखा जाता था कि भूमि किस दर्जे की है। कृषि को प्रोत्साहन देने के लिए राज्य की अनेक सुविधाएं भी दी जाती थी। किसानों की सुरक्षा के लिए सूरी ने पट्टा एवं कबूलियत नामा की व्यवस्था भी की थी। सूरी द्वारा किए गए भू-राजस्व सुधारों से किसानों की स्थिति में भी काफी सुधार आया।

सैनिक प्रबंध :-

शेरशाह सूरी ने सैनिक प्रबंध की ओर भी उचित ध्यान दिया। उसने विशाल स्थायी सेना की स्थापना की,

Sign.....

Scanned with CamScanner

सैनिकों से सीधा संपर्क स्थापित किया, दाग एवं चेहरा प्रथा लाग् की, दुर्गों का निर्माण किया, सेना में हिंदुओं की नियुक्ति की व सेना में कठोर अनुशासन को अपनाया।

इसके अतिरिक्त ने न्याय प्रबंधन की भी उचित व्यवस्था की। सुल्तान, न्याय का स्त्रोत होता था। सूरी के समय दंड बहुत कठोर थे। छोटे-2 अपराधों के लिए कठोर दंड देता था।

प्रजाहितकारी कार्य :-

सूरी अपनी प्रजा की भलाई का बहुत ध्यान रखता था। उसने अनेक प्रजाहितकारी कार्य किए। उसने सड़के बनवा जिनमें सोनारगांव से जेहलम, आगरा से जोधपुर, आगरा से बुहा लाहौर से मुल्तान सड़कों का निर्माण कराया।
इसके अतिरिक्त यात्रियों और व्यापारियों की सुविधा के लिए सभ सड़कों पर दो-दो कोस की दूरी पर सरायों का निर्माण कराया, जिसकी संख्या 1700 थी।
उसने साम्राज्य के विभिन्न स्थानों पर लंगर खोल रखे थे। वह इन लंगरों पर 500 अशर्फियां प्रतिदिन खर्च करता था।
वह शिक्षा के महत्व को भी भलि-भांति समझता था। उसने अनेक मदरसे स्थापित करवाए, जिनमें अरबी, फारसी इत्यादि भाषाओं की शिक्षा दी जाती थी। वह शिक्षकों को अनुदान तथा विद्यार्थियों को वजीफे भी देता था।
इसके अतिरिक्त, उसने अनेक भवनों का निर्माण करवाया। उसके द्वारा बनवाया गया सहसाराम का मकबरा कला की दृष्टि से उत्तम माना जाता है।

शेरशाह सूरी नें केवल एक कुशल शासक था बल्कि एक कुशल

Scanned with CamScanner

संदर्भ

यह कार्यभार मैंने Akash Publication की पुस्तक से एवं studyvinus official की सहायता से पूर्ण किया है।

Thankyou ☺

Scanned with CamScanner

भू-राजस्व प्रणालियाँ

1757 की प्लासी के युद्ध के बाद अंग्रेज़ों द्वारा भू-राजस्व वसू करना आरंभ किया गया। सर्वप्रथम वारेन हेंस्टिंग्स द्वारा 1772 में बंगाल में द्वैध शासन समाप्त कर भू-राजस्व वसूल करना शुरु कर दिया। 1772 ई. में हेस्टिंग्स ने "पंचवर्षीय बंदोबस्त" लागू किया जिसके अंतर्गत प्रत्येक क्षेत्र का भू-राजस्व 5 वर्ष के लिए निर्धारित किया गया। 1777 ई. में यह व्यवस्था समाप्त हो गई। जब यह व्यवस्था समाप्त हुई तो इसने "एक वर्षीय बंदोबस्त" लागू कर दिया। इस व्यवस्था में प्रतिवर्ष भू-राजस्व निर्धारित किया जाता था। यह व्यवस्था 1789-1790 तक चली। इसके बाद 1790 ई. में दस वर्षीय बंदोबस्त लागू कर दिया गया। दस वर्षीय बंदोबस्त के नियम प्रकाशित कर दिए गए तथा यह बतलाया गया कि उस अवधि के अंत में यह व्यवस्था स्थाई कर दी जाएगी। इस प्रकार यह व्यवस्था लागू की गई। भू-राजस्व प्रणालियों में 1790 से 1822 तक तीन व्यवस्थाएं लागू की गई जो इस प्रकार हैं:-

Scanned with CamScanner

भू-राजस्व व्यवस्था

स्थायी बंदोबस्त	रैयतवाड़ी बंदोबस्त	महालवाड़ी बंदोबस्त
लॉर्ड कार्नवालिस (1793)	थॉमस मुनरो & कर्नल रीड (1820)	हॉल्ट मैकेंजी (1822)
बंगाल, बिहार, उड़ीसा, उ.प्र., बनारस, उत्तरी कर्नाटक	मुंबई, मद्रास, असम, पूर्वी बंगाल	उ.प्र., मध्य प्रांत पंजाब
ब्रिटिश सरकार को राजस्व देने की जिम्मेदारी **जमींदार** की	सरकार को राजस्व देने की जिम्मेदारी **किसान** की	भूमि पर **गाँ** का अधिका
समस्त भूमि का 19%	समस्त भूमि का 51%	समस्त भूमि

स्थाई बंदोबस्त :- 22 मार्च 1793 ई. को **लॉर्ड कार्नवालिस** द्वारा बंगाल, बिहार व उड़ीसा में स्थाई बंदोबस्त लागू किया गया। इस व्यवस्था को मालगुजारी, ज़मींदा इस्तमरारी, बीसवेदारी नामों से भी जाना जाता है।

स्थाई बंदोबस्त के प्रावधान :-

इस प्रणाली के मुख्य प्रावधान

1. इस व्यवस्था के अंतर्गत ज़मींदारों को भूमि का स्वामी मान गया। इससे पूर्व उनकी कानूनी स्थिति यह थी कि वे भूमि एकत्र करने का अधिकार तो रखते थे परंतु भूमि के स्वामी नहीं थे। अब वे अपनी भूमि को बेच सकते थे या गिरवी रख सकते थे।

Scanned with CamScanner

PAGE NO.:
DATE: / /

2. स्थाई बंदोबस्त के द्वारा ज़मीदारों से प्रतिवर्ष लिया जाने वाला भूमिकर निश्चित कर दिया गया। कुल वसूल किए गए लगान के 10/11 भाग पर सरकार का अधिकार था तथा शेष 1/11 भाग ज़मीदार को मिलता था।
भूमिकर की मांग निश्चित की गई थी और यह काफी ऊंची थी। इसे भविष्य में किसी भी कीमत पर बढ़ाया नहीं जा सकता था।
यदि ज़मींदार भू-राजस्व देने में असफल रहते तो सरकार को यह अधिकार था कि उनकी भूमि का कुछ भाग बेचकर अपनी बकाया राशि की भरपाई की जाती थी।
खेती तथा भू-राजस्व के संबंध में सरकार का संपर्क केवल सरकार के साथ ही था। जब तक ज़मींदार सरकारी कोष में निश्चित लगान जमा करवाते थे, सरकार ज़मीदार तथा उनके किसानों के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं करती थी ज़मींदार से पुलिस व न्याय संबंधी अधिकार छीन लिए गए। ज़मींदारों को यह वचन दिया गया कि भूमिकर की निश्चित राशि के अतिरिक्त उनसे किसी भी प्रकार का अन्य कर नहीं वसूला जाएगा।

स्थाई बंदोबस्त के लाभ

- इस व्यवस्था से कंपनी को काफी लाभ हुआ। इस बंदोबस्त के प्रमुख लाभ थे :-
- इसके कारण कंपनी की आय में वृद्धि हुई। यह आर्थिक दृष्टि से समृद्धशाली हो गई। ज़मींदार भी कंपनी के कट्टर समर्थक बन गए जिस कारण भारत में कंपनी राज स्थाई व सुदृढ़ हो गया।

Sign.....

Scanned with CamScanner

- इस व्यवस्था से सरकार की **आय निश्चित** हो गई इससे पहले उनकी आय घटती - बढ़ती रहती थी। बोली लगाने वाले व्यक्ति को भूमिकर एकत्रित करने का अधिकार दिया जाता था।
- स्थाई बंदोबस्त के कारण **प्रशासन में अधिक कुशलता** आ गई। कंपनी को भूमिकर एकत्र करने से छुटकारा मिल इस व्यवस्था से कृषि बहुत उन्नत हो गई। 1793 ई. से पहले ज़मीदार कृषि सुधार की ओर कोई ध्यान नहीं दिया जाता था, परंतु भूमि के स्थाई स्वामी बन जाने के कारण उन्होंने कृषि सुधार की ओर ध्यान देना आरंभ कर दिया।
- इस बंदोबस्त का सबसे ज़्यादा **लाभ ज़मींदारों** को हुआ इसके अनुसार, उन्हें भूमि का स्वामी स्वीकार कर लिया गया। उन्होंने भूमि को उन्नत बनाने की ओर ज़ोर दिया। इसके अलावा उन्हें अनुचित करों से भी मुक्ति
- इस बंदोबस्त से सरकार और ज़मींदारों को बार-बार भूमिकर लगाने से भी मुक्ति मिली।
- इसके परिणामस्वरूप बंगाल के कृषकों ने कपास एवं पट जैसी व्यवसायिक फसलों का उत्पादन शुरू किया। फलस्वरूप उद्योगों को आसानी से कच्चा माल उपलब्ध होने लगा जिससे **व्यापार एवं उद्योग का काफी विकास** हुआ।

स्थाई बंदोबस्त के दोष

जहां बंदोबस्त के कुछ लाभ हुए वहीं इसके कुछ दोष भी निकले। **जे. एस. मिल, थार्नटन** आदि इतिहासकारों ने स्थाई बंदोबस्त की कटु आलोचना की है। इस बंदोबस्त की मुख्य हानियां इस प्रकार हैं:-

स्थाई बंदोबस्त ने सरकार को भविष्य में लगान लगाने व बढ़ाने की राशि से वंचित कर दिया। लगान निश्चित करते समय कंपनी ने उपज तथा मूल्य बढ़ने की ओर कोई ध्यान न दिया। भूमि का स्थाई स्वामित्व मिलने से ज़मींद की आय में तो वृद्धि हुई किंतु अधिशेष राजस्व का लाभ सरकार को नहीं मिल सका।

- यह प्रणाली कई **ज़मींदारों के लिए बहुत हानिकारक** सिद्ध हु ज़मींदारों ने जब तक भूमि पर ध्यान दिया तब तक उपज वृद्धि होती रही, परंतु समय के साथ-साथ उनकी रुचि कृषि कार्यों में कम होने लगी। दूसरी ओर, वे भारी मात्रा भूमिकर सरकार को ज़मा करवाते थे। उत्पादन में कमी के कारण समय पर भूमिकर ज़मा नहीं करा सके। कंपनी ने भूमि को बेचकर अपना धन प्राप्त कर लिया। जिस कार अनेक ज़मींदार भूमिहीन हो गए।
- स्थाई बंदोबस्त में **किसानों के हितों की अवहेलना** की गई ज़मींदार कृषकों से निर्धारित कर में दर से २ गुना भूमिकर एकत्र करते थे। इसके अलावा वे किसानों से **मथोरे** नामक कर भी लेते थे जो कृषकों के लिए दे पाना कठिन था, कृषक उनके दास बन गए जिस कारण उनकी स्थिति दयनीय हो गई।
- इस प्रणाली के लागू होने से अनुपस्थित ज़मींदारी का उदय हुआ। ज़मींदार नगरों में निवास करते थे और किसान खेतों में कार्य करते थे। उनकी अनुपस्थिति में उनके एजेंट कृषकों पर अत्याचार करते थे।
- सरकार जब भूमि की बोली लगाती थी, नीलामी के समय अधिक भूमि शहर के धनी वर्ग के लोगों ने ली और इन ज़मींदारों को कृषि का कोई अनुभव नहीं था। ये लोग किसानों से

Scanned with CamScanner

अधिक - से - अधिक भू-राजस्व वसूल करते थे किंतु
के विकास की ओर तनिक भी ध्यान न दिया गया।
:-* अतः स्थाई बंदोबस्त से जहां कम्पनी को लाभ हुआ
वहीं पर यह ज़मींदारों और कृषकों के लिए काफ़ी
हानिकारक सिद्ध हुई।

रैयतवाड़ी प्रणाली

रैयतवाड़ी भू-राजस्व प्रणाली 1792 ई. में **कैप्टन रीड** तथा **थॉमस मुनरो** ने मद्रास प्रैजीडैन्सी के बारामहल में प्रारंभ की। इसके पश्चात् 1820 ई. में थॉमस मुनरो ने इस प्रणाली को पूरे मद्रास में लागू किया। कुछ समय पश्चात् यह व्यवस्था बम्बई चली गई। इस व्यवस्था को रैयतवाड़ी व्यवस्था इसलिए कहते हैं क्योंकि इस प्रणाली के अनुसार रैयत अर्थात् **कृषक** को भूमि का वास्तविक स्वामी माना गया था तथा सरकार द्वारा भू-राजस्व सीधा कृषकों से लिया जाने लगा। यह सरकार तथा किसानों के मध्य सीधा समझौता था। बंबई में रैयतवाड़ी बंदोबस्त कृषकों के साथ 30 वर्षों के लिए

Scanned with CamScanner

कृषकों को भूमि का स्वामी मान लिया गया। अब वे अपनी मर्ज़ी से अपनी भूमि को बेच सकते थे या गिरवी रख सकते थे।
- रैयतवाड़ी प्रणाली लागू हो जाने से बिचौलिए समाप्त हो गए। कृषक सीधे सरकार के पास भूमिकर जमा करा सकते थे।
- कृषकों को पता होता था कि कितना भूमिकर देना है अतः उन्होंने भूमि को अधिक उन्नत बनाने के लिए जी-तोड़ मेहनत करनी आरंभ कर दी।
- इस व्यवस्था में भू-राजस्व की दर बहुत अधिक थी और इसे लम्बी अवधि के लिए स्थाई बना दिया गया था, बार-2 भूमिकर निर्धारण से सरकार को छुटकारा मिला।
- इस प्रणाली में भूमिकर खेतों की उपज के आधार पर लगाया जाता था।
- रैयतवाड़ी प्रणाली से कम्पनी को बहुत लाभ हुआ।

रैयतवाड़ी प्रणाली के दोष

रैयतवाड़ी प्रणाली जहां कंपनी के लिए बहुत लाभदायक सिद्ध हुई वहीं पर यह कृषकों के लिए बहुत हानिकारक सिद्ध हुई। इस प्रणाली के मुख्य दोष इस प्रकार थे:-
- रैयतवाड़ी प्रणाली में पहले आधा भाग भूमिकर लिया जाता था। मनरो ने इसे कुल उपज का एक-तिहाई भाग से अधिक निर्धारित कर दिया। वास्तव में यह कुल उपज का 45% से अधिक होता था। यह दर इतनी ऊंची थी कि इसे कृषक अदा करने में असफल रहे।
- रैयतवाड़ी प्रणाली के अंतर्गत अंग्रेज़ कर्मचारी भूमिकर एकत्रित करते थे। वे कृषकों पर विभिन्न प्रकार के अत्याचार करते थे।

Sign .....

Scanned with CamScanner

जिस कारण कृषकों की दशा शोचनीय हो गई।

- जो कृषक भूमिकर समय पर अदा नहीं कर पाते थे सरकार उनकी भूमि को बेचकर अपना धन वसूल कर लेती थी। अतः एक बड़ी संख्या में कृषक भूमिहीन हो गए।
- समय-2 पर पड़ने वाले अकालों ने भी कृषकों की कमर तोड़ दी।
- सरकार कृषकों की भलाई की ओर कोई ध्यान नहीं देती थी।

:-★

अतः कहा जा सकता है कि अंग्रेजों ने भारत के भिन्न-2 क्षेत्रों में भिन्न-भिन्न भू-राजस्व प्रणालियां लागू की। इस व्यवस्था से जहां कंपनी को लाभ पहुँचा वहीं किसानों की दशा शोचनीय हो गई।

महालवाड़ी व्यवस्था

अंग्रेजों ने उत्तरी भारत में एक तरह की भू-राजस्व प्रणाली लागू की जिसे महालवाड़ी प्रणाली के नाम से जाना जाता है। उत्तरी भारत में ज़मींदार या ग्राम पंचायतों के अधीन भूमि को **महाल** कहकर पुकारा जाता था। ब्रिटिश सरकार ने प्रत्येक महाल को आधार मानकर सामूहिक रूप से भू-राजस्व निर्धारित किया।

मेकेंजी नामक एक अंग्रेज़ अधिकारी के सुझावों को 1822 ई. के रेग्यूलेशन VII में कानून का रूप प्रदान किया गया। विस्तृत अध्ययन के बाद **राबर्ट बर्ड तथा जेम्स थामसन** नामक ब्रिटिश अधिकारियों ने पश्चिमी उत्तर प्रदेश तथा मध्य प्रांत के कुछ प्रदेशों में यह व्यवस्था लागू की गई। बाद में इस बंदोबस्त को पंजाब में भी लागू किया गया। इस व्यवस्था के अंतर्गत कलैक्टर्स ने

Scanned with CamScanner

प्रत्येक महाल के किराए को 33% भाग भू-राजस्व के रूप में निश्चित करके भूमि ग्राम पंचायतों तथा ज़मींदारों में वितरित कर दी। इस व्यवस्था में भूमिकर में वृद्धि का भी प्रावधान रखा गया। ज़मींदार भूमिकर के रूप में भू-भारक का 30% सरकार को देते थे। ग्राम सामूहिक रूप से भूमिकर भूमि किराए का 95% अदा किया करते थे।

महालवाड़ी प्रथा में अनेक दोष थे। अतः 1822 के रेग्यूलेशन की लार्ड विलियम बैंटिक के कार्यकाल में पुनः समीक्षा की गई। 1833 ई. में बैंटिक ने नया अधिनियम पास कराया और भूमिकर आधा भाग निश्चित किया गया। यह व्यवस्था 30 वर्षों के लिए निश्चित किया गया।

इस व्यवस्था के अधीन ज़मींदारी प्रथा पर ही ज़ोर दिया गया। महालवाड़ी प्रणाली में महाल और ज़मींदारों से बहुत ज्यादा भू-राजस्व लिया जाता था। अतः कृषकों की स्थिति अत्यंत दयनीय हो गई। भूमि पर बड़े-2 साहूकारों का आधिपत्य स्थापित होने लगा जिससे अर्थव्यवस्था अस्त-व्यस्त हो गई।

अन्त में कहा जा सकता है कि अंग्रेजों ने भारत के भिन्न-2 क्षेत्रों में भिन्न-2 भू-राजस्व प्रणालियां लागू की। उसका मुख्य उद्देश्य अधिक-से-अधिक मात्रा में भूमिकर प्राप्त करना था। वे कृषकों की दशा को उन्नत बनाने की ओर कोई प्रयास नहीं करते थे। जिस कारण कृषकों की स्थिति अत्यंत दयनीय हो गई। **ताराचंद के अनुसार,** "अंग्रेज़ों की भूमिकर नीति 1857 ई. के विद्रोह के लिए उत्तरदायी थी।"

संदर्भ ग्रंथ सूची

यह कार्यभार Aakash Publication एवं Youtube Channel Study Virus official से कि लिखा गया है।

Scanned with CamScanner

भारत में मंदिर वास्तुकला

भारत की प्राचीन स्थापत्य कला में मंदिरों का विशिष्ट स्थान है। भारतीय संस्कृति में मंदिर निर्माण के पीछे यह सत्य छुपा था कि ऐसा धर्म स्थापित हो जो जनता को सहजता व व्यवहारिकता से प्राप्त हो सके। इसकी पूर्ति के लिए मंदिर स्थापत्य का प्रार्दुभाव हुआ। ई प्रारंभ में मंदिर सादे थे और इनमें स्तंभ अलंकृत नहीं थे। शिखरों के स्थान पर छत सपाट होती थी तथा गर्भगृह में भगवान की ऊँची प्रतिमा, स्थापित की जाती थी। गर्भगृह के समक्ष स्तंभों पर आश्रित एक छोटा या बड़ा बरामदा भी मिलने लगा।

मंदिर निर्माण की प्रक्रिया का आरंभ तो मौर्यकाल से शुरू हो गया था, किंतु आगे चलकर उसमें सुधार हुआ, जिसे गुप्त काल के मंदिरों में देखा जा सकता है। गुप्तकालीन मंदिर आकार में बहुत छोटे होते थे। इन मंदिरों को ईंटों के वर्गाकार चबूतरों पर बनाया जाता है जिस पर चढ़ने के लिए सीढ़ियां होती थीं। इसके बीच में एक कोठरी होती थी जो गर्भगृह का काम करती थी। कोठरी की छत सपाट होती थी और इसमें अलग से कोई प्रदक्षिणापथ नहीं होता था।

मंदिर हिंदू धर्म में बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। हिंदू धर्म में मंदिर देवी-देवताओं के निवास स्थान माने जाते हैं। भारत में मंदिर निर्माण के साक्ष्य चौथी शताब्दी ई. से मिलने प्रारंभ होते हैं। आरंभ में संरचनात्मक मंदिर के अलावा चट्टानों को काटकर भी मंदिरों का निर्माण किया जाता था। भारत में लाखों मंदिर हैं। भारत के ये मंदिर कई प्रकार की शैलियों में बनाए गए हैं। इन मंदिरों की वास्तुकला यहां आने वाले पर्यटकों को आश्चर्यचकित करती

Signature .....

Scanned with CamScanner

है। प्राचीन भारतीय इतिहास के आधार पर भारत में निर्माण शैलियों को तीन प्रमुख शैलियों में बांटा गया है

नागर शैली :-

'नागर' शब्द नगर से बना है। सर्वप्रथम नगर में निर्माण होने के कारण इसे **नागर शैली** कहा जाता है। यह मंदिर स्थापत्य की संरचनात्मक शैली है जो **हिमालय से लेकर विंध्य पर्वत** तक के क्षेत्रों में प्रचलित थी। इसे 8वीं से 13वीं शताब्दी के बीच उत्तर भारत के शासकों द्वारा पर्याप्त संरक्षण दिया गया। नागर स्थापत्य के मंदिर नीचे से ऊपर आयताकार रूप में निर्मित होते थे। इस शैली के मंदिरों को एक विशाल चबूतरे पर बनाया जाता था और उस तक पहुंचने के लिए सीढ़ियां बनी होती थीं। इस शैली में गर्भगृह के ऊपर टेढ़ी रेखाओं के साथ सर्पाकार शिखर का निर्माण किया जाता था। सबसे ऊपर कलश होता था। नागर शैली के अंतर्गत मंदिर

Deluxe

Scanned with CamScanner

का निर्माण खुले क्षेत्र में किया जाता था। गर्भगृह के सामने एक विशाल कक्ष बनाया जाता था जिसे मंडप कहते हैं, जो पिरामिड के आकार का होता था। इस मंडप का इस्तेमाल मंदिर में उत्सव मनाने व बैठने के लिए करते थे। मंडप के आगे एक ड्योढ़ी होती थी। मंदिर के चारों ओर ऊँची-ऊँची दीवारें बनाई जाती थीं, जिसमें बड़ी-बड़ी दरवाज़े लगाए जाते थे।

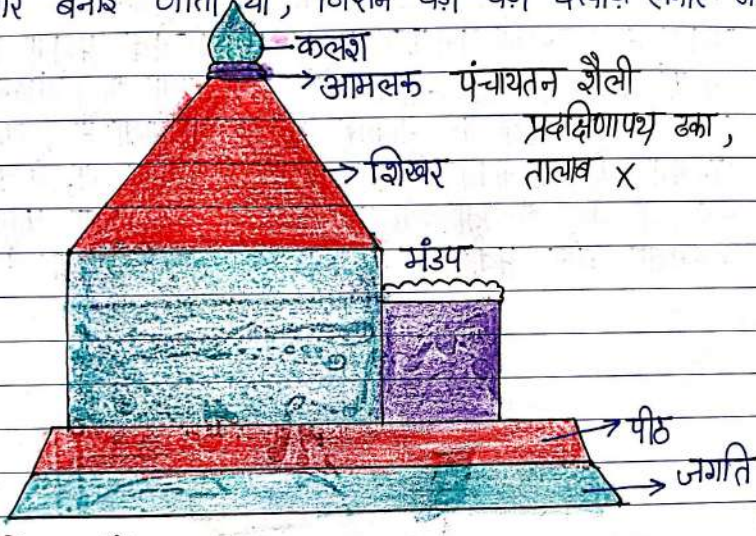

विशेषताएँ :-

- नागर शैली में शिखर अपनी ऊँचाई के क्रम में ऊपर की ओर क्रमशः पतला होता है। मंदिर का शिखर मीनारनुमा होता था।
- मंदिर में सभा भवन और प्रदक्षिणापथ भी होता था।
- शिखर के नियोजन में बाहर की रूपरेखा स्पष्ट तथा प्रभावशाली ढंग से विद्यमान होती थी जिस कारण इसे 'रेखाशिखर' भी कहते हैं।
- शिखर पर आमलक की स्थापना होती थी।
- इस शैली में मंदिर चतुष्कोणीय होते थे और गर्भगृह वर्गाकार।

Signature .....

Scanned with CamScanner

- नागर मंदिरों का शिखर रेखीय / वक्राकार होता था।
- नागर मंदिरों का निर्माण सामान्यतः ऊंचे चबूतरे पर किया

उदाहरण:- सूर्य का कोणार्क का सूर्य मंदिर

कोणार्क मंदिर पूर्वी ओडिशा के पवित्र शहर पुरी के पास स्थित है। इसका निर्माण **राजा नरसिंहदेव प्रथम** द्वारा 13 वीं शताब्दी (1238-1264) में किया गया था। मंदिर को एक विशाल रथ के आकार में बनाया गया है। यह सूर्य भगवान को समर्पित है। कोणार्क के मंदिर न केवल अ स्थापत्य की भव्यता के लिए बल्कि मूर्तिकला कार्य की गहनता और प्रवीणता के लिए भी जाना जाता है। इसे

वर्ष 1984 में **यूनेस्को द्वारा विश्व धरोहर स्थल** घोषित किया गया था। हिंदू मान्यता के अनुसार, सूर्य देवता के रथ में बारह जोड़ी पहिए मौजूद हैं। साथ ही सात घोड़े भी हैं जो रथ को खींचते हैं। यह सात घोड़े सप्ताह के दिन के प्रतीक हैं। वही 12 जोड़ी पहिए दिन के 24 घंटे के प्रतीक हैं। इनमें 8

Deluxe

Signature

Scanned with CamScanner

bestfriend
Date
Page

ताड़ियां मौजूद हैं जो 8 प्रहर का प्रतीक है। यह मंदिर सूर्य देवता के रथ के आकार का ही बनाया गया है। यहां की सूर्य मूर्ति को पुरी के जगन्नाथ मंदिर में सुरक्षित रखा गया है। यह मंदिर समय की गति को दर्शाता है।

द्रविड़ शैली :-

द्रविड़ शैली दक्षिण भारतीय हिंदू स्थापत्यकला कला की तीन में से एक शैली है। यह शैली दक्षिण भारत में विकसित होने के कारण द्रविड़ शैली कहलाती है। द्रविड़ शैली कृष्णा नदी से लेकर कन्याकुमारी तक प्रचलित थी। चोल शासकों के द्वारा द्रविड़ शैली में कई मंदिरों का निर्माण किया गया था। इस शैली के गर्भगृह में ऊपर एक के बाद एक पाँच से सात मंज़िलों का निर्माण किया जाता था। हर मंज़िल का निर्माण एक विशेष शैली में किया जाता था, जिसे विमान कहा जाता था। दक्षिण भारत में चोल शासकों द्वारा द्रविड़ शैली में कई मंदिर बनाए गए जिनमें तंजौर का शिव मंदिर, महाबलीपुरम का मंदिर, ऐलोरा का कैलाशनाथ मंदिर प्रमुख हैं।

जलाशय, प्रदक्षिणा पथ खुला, गोपुरम, पंचायतनशैली तालाब

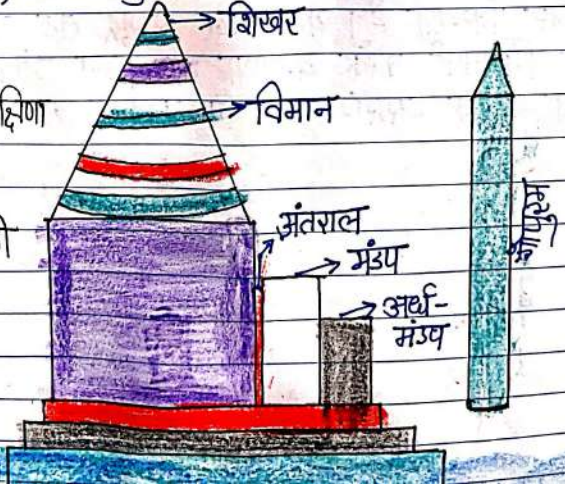

Scanned with CamScanner

विशेषताएं :-

- मंदिरों का निचला भाग वर्गाकार और
गुंबदाकार वाला होता था।
- शैली में चारदीवारी का निर्माण किया जाता था।
- प्रवेश के लिए मंदिरों में विशालकाय गोपुरम बनाए जा
- द्रविड़ मंदिरों के शिखर पिरामिडाकार होते थे।
- मंदिरों के निर्माण में तालाब का निर्माण भी इसकी वि
- द्रविड़ मंदिर अष्टभुजाकार होते थे।
- द्रविड़ मंदिर में शिखर के सर्वोच्च भाग पर स्तूपिका ब
होती थी।
- द्रविड़ शैली के मंदिर बहुमंजिला होते हैं। इस शैली में
चलकर नायक शैली का विकास हुआ जिसके उदाहरण
मीनाक्षी मंदिर, रामेश्वरम् मंदिर आदि हैं।

उदाहरण :- महाबलिपुरम् का मंदिर

महाबलिपुरम का विशाल शिव मंदिर अपने अलौकिक शिल्प-
के लिए विख्यात है। यह मंदिर समुद्र तट पर स्थित है
जिसे चिनवाई काके बनवाया था। इस मंदिर का निर्माण
पल्लव शासक नरसिंहवर्मन ने करवाया था।

Scanned with CamScanner

मंदिर का कलश बहुत सुंदर है जो मानवीय शिल्पकला की प्रवीणता का परिचायक है। वहां के सभी स्तंभ प्रायः खंडित हो गए हैं। इन पर बने रथों को पाँच पांडवों के नाम से भी जाना जाता है। यह कलाकार की अद्भुत शिल्पकला का नमूना है। किसी का आकार घोड़े की नाल की तरह है, तो किसी का छोटी लम्बी नौकाओं की तरह। पास ही प्रकाश स्तंभ भी स्थित है जो समुद्री यात्रियों का मार्गदर्शन करता है।

वेसर शैली :-

नागर और द्रविड़ शैली के मिश्रित रूप को वेसर शैली की संज्ञा दी गई है। यह विन्यास में द्रविड़ शैली जैसी तथा रूप में नागर शैली जैसी होती है। इस शैली के मंदिर विंध्यांचल से कृष्णा नदी के बीच में निर्मित हैं। इस शैली को चालुक्य शैली भी कहते हैं। कर्नाटक के चालुक्य मंदिर वेसर शैली के माने जाते हैं। चालुक्यों ने वेसर शैली को प्रोत्साहन दिया था।

विशेषताएं :-

- इस शैली के अंतर्गत मंदिरों की ऊँचाई कम होती है जबकि मंजिलों की संख्या को वैसे ही बनाए रखा जाता है।
- इस शैली के मंदिर बहुभुजी आकृति के होते हैं।
- इस शैली के मंदिर का निर्माण एक ऊंचे ठोस चबूतरे पर किया जाता है।
- इस शैली के मंदिरों की दीवारों पर पुराणों तथा कथाओं के विभिन्न दृश्यों की चित्रकारी देखने को मिलती है।
- शैली के मंदिरों का निर्माण चालुक्य, राष्ट्रकूट तथा होयसल राजवंशों के समय हुआ।
- वेसर शैली में बौद्ध चैत्यों के समान अर्द्धचंद्राकार संरचना भी देखी जा सकती है।

Scanned with CamScanner

उदाहरण :- ऐहोल के मंदिर

ऐहोल को 'मंदिरों का नगर' कहा जाता है। यहां कम से कम 700 मंदिरों के अवशेष प्राप्त हुए हैं। इसका निर्माण 450-600 ई. के बीच हुआ। इसी समय उत्तरी भारत में गुप्त मंदिरों का निर्माण हुआ तथा नागर शैली का प्रभाव दक्षिण भारत में पहुँचा। यही कारण है कि ऐहोल के मंदिरों में नागर तथ द्रविड़ शैली का मिश्रण मिलता है। अधिकांश मंदिर विष्णु एवं शिव के हैं। हिंदू मंदिर में शिव, विष्णु, दुर्गा

सूर्य और अन्य देवताओं को समर्पित मंदिर है। ऐहोल को "मंदिरों का पालना" कहा जाता है। इसके सुंदर दृश्य को देखकर दर्शक आश्चर्यचकित रह जाते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

यह कार्यभार मैंने Aakash Publication की पुस्तक व Youtube channel "Exam मंथन 24x7" की सहायता से पूर्ण किया है।

Signature ....

Scanned with CamScanner

इतिहास को जानने के पुरातात्विक स्त्रोत

पुरातात्विक स्त्रोतों का संबंध प्राचीन अभिलेखों, सिक्कों, स्मारकों, भवनों, मूर्तियों तथा चित्रकला से है, यह साधन काफी विश्वसनीय हैं। इन स्त्रोतों की सहायता से प्राचीन काल की विभिन्न मानवीय गतिविधियों की काफी सटीक जानकारी मिलती है। इनमें से अधिकतर स्त्रोतों का वैज्ञानिक सत्यापन किया जा सकता है। इस प्रकार के प्राचीन स्त्रोतों का अध्ययन करने वाले अन्वेषकों को पुरातत्वविद कहा जाता है। इनका वर्णन इस प्रकार

Scanned with CamScanner

अभिलेख :- भारतीय इतिहास के संबंध में अभिलेखों का स्थान अति महत्वपूर्ण है, भारतीय इतिहास के बारे में प्राचीन काल के कई शासकों के अभिलेखों से काफी महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त हुई है। यह अभिलेख पत्थर, दीवार, स्तंभ, धातु की पट्टी तथा मिट्टी की वस्तुओं पर उकेरे हुए प्राप्त हुए हैं। **प्राचीन अभिलेखों के अध्ययन को पुरालेखशास्त्र** कहा जाता है। अभिलेखों के अध्ययन को Epigraphy कहा जाता है। अभिलेखों का उपयोग शासकों द्वारा आमतौर पर अपने आदेशों का प्रसार करने के लिए किया जाता था। यह अभिलेख आमतौर पर ठोस सतह वाले स्थानों पर मिलते हैं, लम्बे समय तक अमिट बनने के लिए इन्हें ठोस सतह पर लिखा जाता था। इस प्रकार के अभिलेख मंदिर की दीवारों, स्तंभों, स्तूपों, मुहरों तथा ताम्रपत्र इत्यादि पर प्राप्त होते हैं। यह अभिलेख अलग-अलग स्थानों भाषाओं में लिखे गए हैं, इनमें से प्रमुख भाषाएँ संस्कृत, पाली, प्राकृत हैं।

भारत के सबसे प्राचीन अभिलेख सिंधु घाटी सभ्यता से प्राप्त हुए हैं, यह अभिलेख औसतन 2500 ई.पू. के समय काल के हैं। रुद्रदमन का जूनागढ़ अभिलेख, समुद्रगुप्त का इलाहाबाद प्रयागप्रशस्ति अभिलेख, ऐहोल अभिलेख इत्यादि प्र समयकाल में घटित घटनाओं का वर्णन करते हैं।

भूमि अनुदान पत्र :- ये प्रायः तांबे की चादर पर उत्कीर्ण इनमें राजाओं और सामंतों द्वारा भिक्षुओं, ब्राह्मणों, मंदिरों, विहा जागीरदारों और अधिकारियों को दिए गए गाँव, भूमियों और राजस्व संबंधी दानों का विवरण है। ये ताम्रपत्र प्राकृत, संस्कृत तमिल एवं तेलगू भाषाओं में लिखे गए हैं।

Scanned with CamScanner

पूर्व मध्यकालीन भूमि अनुदान पत्र प्राप्त होने से यह निष्कर्ष निकाला गया कि पूर्व मध्यकालीन भारत में सामंती अर्थव्यवस्था स्थापित हो गई थी।

मूर्तिकला :-

भारत में कई धर्मों का उद्भव व विकास होने के कारण धार्मिक मूर्तियां काफी प्रचलन में रही हैं। मूर्तियां प्राचीकाल की धार्मिक व्यवस्था, संस्कृति एवं कला के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त करवाने का साधन हैं। प्राचीनकाल भारत में सारनाथ, भरहुत, बोधगया और अमरावती आदि मूर्तिकला के मुख्य केंद्र हैं। विभिन्न मूर्तिकला में गंधार कला व मथुरा कला प्रमुख हैं। कुषाणकालीन मूर्तियों में जहाँ विदेशी प्रभाव अधिक है वहीं गुप्तकालीन मूर्तिकला में स्वाभाविकता परिलक्षित होती है। जबकि गुप्तोत्तर कला में सांकेतिकता अधिक है।

चित्रकला :→ अजंता गुफा में उत्कीर्ण माता और शिशु तथा मरणासन्न राजकुमारी जैसी चित्रों की अर्धकला सर्वकालिक है जिनसे गुप्तकालीन कलात्मक और तात्कालीन जीवन की झलक मिलती है। चित्रकला से प्राचीनकाल के

Signature .....

Scanned with CamScanner

व्यवस्थाओं के बारे में विविध जानकारी प्राप्त होती है
के माध्यम से प्राचीन समय के लोगों के जीवन, संस्कृति
तथा कला की जानकारी मिलती है। मध्यप्रदेश में स्थित
भीमबेटका की गुफाओं के चित्रों से प्राचीनकाल की सांस्कृतिक
विविधता का आभास होता है।

अवशेष :-

पुरातात्विक साधनों में उत्खनन से प्राप्त पुरावशेषों
अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। पुरावशेष सामग्रियों से वहां की
सभ्यता और संस्कृति के स्वरूप एवं उनके क्रमिक विकास
के बारे में पर्याप्त जानकारी प्राप्त होती है। 20 वीं शताब्दी
के प्रारंभ में भारत में जो उत्खनन हुए उनसे अनेक
विलुप्त सभ्यताएं प्रकाश में आई तथा भारतीय प्रागैतिहासिक
एवं ऐतिहासिक काल पर पर्याप्त प्रकाश पड़ा। हड़प्पा, मोहनजो
एवं उनसे संबंधित विभिन्न पुरास्थलों एवं नगरों तथा के पुरास्थ
के उत्खनन के अभाव में हम इन नगरों तथा अबादियों के
संस्कृति से पूर्णतया अपरिचित रहते। विभिन्न पुरास्थलों के
उत्खननों तथा सर्वेक्षणों के माध्यम से हमें इन नगरों संग्रहित
पत्थर उपकरणों तथा अन्य सामग्रियों से प्रागैतिहासिक संस्कृतियों

Scanned with CamScanner

का ज्ञान मिला। पुरातात्विक अवशेषों से प्राचीन इतिहास की जानकारी में महत्वपूर्ण सहायता प्राप्त होती है।

सिक्के :-

प्राचीन इतिहास को जानने में सिक्कों का भी महत्वपूर्ण योगदान है। खुदाई के दौरान कुछ सिक्के मिट्टी की उपरी सतह पर प्राप्त हुए हैं। इन सिक्कों में केवल भारतीय सिक्के ही नहीं अपितु विदेशी सिक्के भी प्राप्त हुए हैं। खुदाई के दौरान विभिन आकार के सिक्के पाए गए हैं। ये सिक्के बेढ़ंगे आकार के हैं जिस कारण इन्हें आहत सिक्के भी कहा जाता है। इसके अतिरिक्त मुहरें भी इतिहास के निर्माण में बहुत सहायक सिद्ध होती हैं प्राचीनकाल में लेन-देन के लिए उपयोग की जाने वाली वस्तु विनिमय व्यवस्था के बाद सिक्के प्रचलन में आए।

सिक्कों की बहुलता से प्राप्ति सामान्यतः आर्थिक उन्नति एवं व्यापार वाणिज्य की प्रगति का सूचक मानी जाती है। यह सिक्के विभिन धातुओं जैसे :- सोना, चाँदी, तांबे आदि से निर्मित होते थे। प्राचीन भारतीय सिक्कों की एक यह विशेष है कि इनमें अभिलेख नहीं पाए गए हैं। आमतौर पर प्राचीन सिक्कों पर चिन्ह पाए गए हैं। इन सिक्कों का संबंध ईसा से पहले 6वीं सदी से है। भारत में स्वर्ण मुद्राएं सबसे

Scanned with CamScanner